अंत में - ऐसा कहा कि यह आत्मा है उसका मूल कायमी असली स्वभाव शुद्ध अतीन्द्रिय आनंद और ज्ञान है। वह अपने स्वभाव को छोड़कर राग, द्वेष, पुण्य-पाप और मोह... उसमें जाये, उसमें ठहरे, उसमें रहे तो अनात्मा है। आत्मपना न रहा, वहाँ, आया न ? - ऐसा परसमयपना, यह तो परसमय है। आहाहा ! शुद्ध

चैतन्य वस्तु अनाकुल आनंद स्वरूप, वह राग में रहे, चाहे तो दया, दान, व्रत, भक्ति का राग हो, परंतु राग में रहे परिणमे तो वह अनात्मा है। वह परसमयपना है।

उससे उत्पन्न होता परसमय, स्वसमयपना, द्विविधपना यह जीव नाम के समय को कहाँ से हो ? यह दोपना क्यों हो ! स्वयं चैतन्य स्वरूप उसके स्वयं के अंदर श्रद्धा... चैतन्य की निर्विकल्प श्रद्धा, उसका ज्ञान और उसकी रमणता उसका नाम यहाँ स्वसमय, आत्मा है, और धर्मात्मा उसे कहा जाता है। आहा !

`इसलिये समय का एकपना ही सिद्ध होता है'। स्वरूप जो है वह अपने स्वरूप को छोड़कर और पुण्य और पाप के भाव यह मेरा - ऐसा मानकर वहाँ रहे तो मिथ्यादृष्टि परसमय है। एकपने में यह द्विविधपना खड़ा हुआ यह अशोभा है, अशोभनीय है यह चैतन्य की शोभा नहीं। (- ऐसा है।) यहाँ तो अभी दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा आदि करे उसे वह धर्म माने। यहाँ कहते हैं कि इस भाव में आत्मा रहे उसे हम अनात्मा कहते हैं, परसमय कहते हैं। अब इन सबका मेल किस प्रकार करना ? आहाहा !

भावार्थ :- `निश्चय से' वास्तव में `सर्व पदार्थ अपने-अपने स्वभाव में स्थित रहते हुये ही शोभा पाते हैं। परंतु जीव नामक पदार्थ की अनादिकाल से पुद्गल कर्म के साथ निमित्तरूप बंध अवस्था है'। संयोगरूपी बंध अवस्था है। उस बंध अवस्था से इस जीव में विसंवाद खड़ा होता है। वास्तविक तत्त्व यह रहता नहीं। आहाहा ! पुण्य और पाप के भाव यह हमारे - ऐसा मानकर परिणमता है, यह विसंवाद मिथ्यादृष्टि है। आहा ! ऐसी बात बहुत सूक्ष्म है !!

सम्यग्दर्शन के लिये तो यह पुण्य पाप के विकल्प और राग, उससे भिन्न, चैतन्यस्वरूप के सन्मुख होकर उसका आश्रय लेकर जो दर्शनज्ञान होता। उसे यहाँ स्वसमय आत्मा धर्मात्मा कहते हैं - ऐसा है।

`बंध अवस्था से इस जीव में विसंवाद खड़ा होता है'। अबंध स्वरूप प्रभु, मुक्त स्वरूप है उसमें उसे राग के विकल्प के साथ संबंध- ऐसा जो बंध, संबंध - ऐसा जो बंध। आहाहा ! उससे विसंवाद खड़ा होता है। झगड़ा खड़ा होता है, दुःख खड़ा होता है। आहाहा !

`इसलिये वह शोभा पाता नहीं' कौन ? जीव। भगवान आत्मा तो पवित्रता का पिण्ड है, उसमें पुण्य पाप के भाव और मिथ्यात्वभाव यह अपवित्र है। पवित्रवस्तु अपवित्र रूप परिणमे यह अशोभा है। यह इसकी शोभा नहीं। आहाहा ! पवित्र जो वस्तु अंदर जिनस्वरूपी यह पवित्ररूप, वीतरागरूप, अकषायभावरूप वस्तु है - ऐसी अकषाय भावरूप हो, तब उसकी शोभा है (पर्याय में) - ऐसा सूक्ष्म है। लोगों को (कुछ मालुम नहीं)

बेचारे भटककर जिंदगी समाप्तकर देते हैं। आहाहा !

इसलिये वह आत्मा शोभा नहीं पाता। एकरूप जो पवित्र शुद्ध चैतन्य है यह द्विविध नाम अन्यप्रकार से जो रागादिक है उसमें परिणमें और उसमें रहे... यह अशोभा है, यह मिथ्यात्व भाव है, यह दुःखरूप दशा और चौराशी के भाव को उत्पन्न करनेवाला भाव है। आहाहा ! सूक्ष्म बहुत भाई !

इसलिय वास्तविकरूप में विचारने में आये, वास्तव में सत्य स्वरूप, चैतन्य का वास्तविक स्वरूप है, त्रिकाली है उसे जो विचारने में आये `तो एकपना ही सुन्दर है' यह शुद्धपने में दृष्टि ज्ञान और रमे यही शोभा है। आहाहा ! सुन्दर वस्तु है यह सुन्दररूप परिणमे तब यह शोभा है। यह सुन्दर वस्तु है... (रागरूप परिणमे) यह तो विरुद्ध है। आहाहा ! एकपना सुन्दर है अर्थात कि राग के विकल्प बिना... उसका स्वरूप निर्विकल्प राग बिना है। ऐसे स्वरूप की श्रद्धा, ज्ञान और रमणता अंतर में यह एकपना शोभता है। `द्विविधपना' उसे उपाधिभाव (निमित्त से) यह उससे शोभा पाता नहीं। तीसरी गाथा में बहुत कहा है। तीसरी गाथा में यह बहुत कहा है। एक रजकण दूसरे रजकण को छुये नहीं। यह क्या कहते हैं।।

लोग तो कहते हैं कर्म के उदय के कारण जीव को विकार होता है ? तब यहाँ कहते हैं ***कर्म का उदय तो जड़ की अवस्था है और राग विकार होता है यह तो चैतन्य की विकृत अवस्था, परसमयपना है। आहाहा ! और यह भी जीव स्वयं करता है, तब होता है, कर्म के कारण नहीं, क्योंकि एक द्रव्य जहाँ दूसरे द्रव्य को छूता नहीं तो उस द्रव्य से इसमें हुआ यह बात बिलकुल झूठी है।*** आहाहा बहुत कठिन काम। (गले उतरना) यह तीसरी गाथा हुयी अब चौथी....(गाथा)

गाथा - ४

अथैतदसुलभत्वेन विभाव्यते -

सुदपरिचिदाणुभूदा सव्वस्स वि कामभोगबंधकहा।
एयत्तस्सुवलंभो णवरि ण सुलहो विहत्तस।।४।।

श्रुतपरिचितानुभूता सर्वस्यापि कामभोगबंधकथा।
एकत्वस्योपलंभः केवलं न सुलभो विभक्तस्य।।४।।

अब, उस एकत्व की असुलभता बताते हैं :-

है सर्व श्रुत-परिचित-अनुभूत, भोगबंधनकी कथा।
परसे जुदा एकत्वकी, उपलब्धि केवल सुलभ ना।।४।।

गाथार्थ :- [सर्वस्य अपि] सर्व लोक को [कामभोगबन्धकथा] कामभोगसंबंधी बन्धकी कथा तो [श्रुतपरिचितानुभूता] सुनने में आ गई है, परिचय में आ गई है, और अनुभव में भी आ गई है, इसलिये सुलभ है; किन्तु [विभक्तस्य] भिन्न आत्माका [एकत्वस्य उपलंभः] एकत्व होना कभी न तो सुना है, न परिचय में आया है, और न अनुभव में आया है, इसलिये [केवलं] एकमात्र वही [न सुलभः] सुलभ नहीं है।

टीका :- इस समस्त जीवलोक को, कामभोगसंबंधी कथा एकत्व से विरुद्ध होने से अत्यंत विसंवाद करानेवाली है (आत्मा का अत्यंत अनिष्ट करनेवाली है) तथापि, पहले अनंत बार सुनने में आई है, अनंत बार परिचय में आई है, और अनंत बार अनुभव में भी आई है। वह जीवलोक, संसाररूपी चक्र के मध्य में स्थित है, निरंतर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भावरूप अनंत परावर्तन के कारण भ्रमण को प्राप्त हुआ है, समस्त विश्व को एकछत्र राज्य से वश करनेवाला महा मोहरूपी भूत जिसके पास बैल की भाँति भार वहन करता है, जोर से प्रगट हुए तृष्णारूपी रोग के दाह से अंतरंग में पीड़ा प्रगट हुई है, आकुलित हो होकर मृगजल की भाँति विषयग्राम को (इन्द्रियविषयों के समूह को) जिसने घेरा डाल रखा है, और वह परस्पर आचार्यत्व भी करता है (अर्थात दूसरों से कहकर उसीप्रकार अंगीकार करवाता है)। इसलिये

कामभोग की कथा तो सबके लिये सुलभ है। किन्तु निर्मल भेदज्ञानरूपी प्रकाश से स्पष्ट भिन्न दिखाई देनेवाला यह मात्र भिन्न आत्मा का एकत्व ही है, - जो कि सदा प्रगटरूप से अंतरंग में प्रकाशमान है, तथापि कषायचक्र (-कषायसमूह) के साथ एकरूप जैसा किया जाता है, इसलिये अत्यंत तिरोभाव को प्राप्त हुआ है (-ढक रहा है) वह, अपने में अनात्मज्ञता होने से (स्वयं आत्मा को न जानने से) और अन्य आत्मा को जाननेवालों की संगति-सेवा न करने से, न तो पहले कभी सुना है, न परिचय में आया है और न कभी अनुभव में आया है, इसलिये भिन्न आत्मा का एकत्व सुलभ नहीं है।

भावार्थ :- इस लोक में समस्त जीव, संसाररूपी चक्रपर चढ़कर पंच परावर्तनरूप भ्रमण करते हैं। वहाँ उन्हें मोहकर्मोदयरूपी पिशाच के द्वारा जोता जाता है, इसलिये वे विषयों की तृष्णारूपी दाह से पीड़ित होते हैं, और उस दाह का इलाज (उपाय) इन्द्रियों के रूपादि विषयों को जानकर उनकी ओर दौड़ते हैं, तथा परस्पर भी विषयों का ही उपदेश करते हैं। इसप्रकार काम तथा भोग की कथा तो अनंतबार सुनी, परिचय में प्राप्त की और उसीका अनुभव किया, इसलिये वह सुलभ है। किन्तु सर्व परद्रव्यों से भिन्न एक चैतन्यचमत्कारस्वरूप अपने आत्मा की कथा का ज्ञान अपने को अपने से कभी नहीं हुआ, और जिन्हें वह ज्ञान हुआ है उनकी कभी सेवा नहीं की; इसलिये उसकी कथा न तो कभी सुनी, न परिचय किया और न अनुभव किया इसलिये उसकी प्राप्ति सुलभ नहीं, दुर्लभ है।।

गाथा - ४ पर प्रवचन

अब उस एकत्व की असुलभता बताते है।

राग से विभक्त (अर्थात) भिन्न और स्वभाव से एकत्व यह सुलभ नहीं, दुर्लभ है। अनंतकाल से किया नहीं अतः दुर्लभ है। असुलभ है अर्थात सुलभ नहीं। आहाहा !

सुदपरिचिदाणुभूदा सव्वस्स वि कामभोगबंधकहा।
एयत्तस्सुवलंभो णवरि ण सुलहो विहत्तस।।४।।

है सर्व श्रुत-परिचित-अनुभूत, भोगबंधनकी कथा।
परसे जुदा एकत्वकी, उपलब्धि केवल सुलभ ना।।४।।

`इस समस्त जीव लोक को'... इसमें सभी आगये, निगोद के जीव, जिन्हें अभी तक त्रसपना मिला नहीं, इतने अनंत जीव पड़े हैं निगोद में, सूक्ष्म निगोद, बादर

निगोद, ऐसे जीव हैं कि जिनने `अभी तक त्रसपना पाया नहीं। तो भी यहाँ तो आचार्य कहते हैं समस्त जीवलोक को राग, काम अर्थात राग और भोग अर्थात उसका भोगना - ऐसी कथा... इच्छा करना और इच्छा को भोगना। इसकी कथा तो तुमने, अनंत बार सुनी है। आहाहा !' राग को करने का और भोगने का उपदेश तो तूने सुना है, और उसका भाव भी सुना है। आहाहा ! एकेन्द्रिय जीव ने भी यह सुना है। सुना है का अर्थ यह है कि वह राग का वेदन करता है अर्थात् उसका अनुभव करता है। सुना था, यह उसका फल मिल गया।

आलू सकरकन्द आदि में रहनेवाले कितने ही जीव तो अभी बाहर नहीं निकले हैं, तो भी उन्हें काम-भोग की कथा का अनुभव है। उसे राग का अनुभव है अर्थात् उसने सुना है, और परिचय तो इसमें आ ही गया। सुनकर परिचय करके अनुभव किया था उसका फल तो यह था। आहाहा !

यह समस्त जीवलोक, एकेन्द्रिय से लेकर नौवीं ग्रैवेयक गये जो मिथ्यादृष्टि साधु... जैन के साधु होकर पंचमहाव्रत पाले, स्त्री-कुटुंब, राज्य छोड़कर अनंतबार मुनिपना लिया,... कारण कि यह राग है, यह राग की बात सुनकर उसने किया और भोगा है। आहाहा! जैसे एकेन्द्रिय जीव को राग का अनुभव है, इसीप्रकार नौवीं ग्रैवेयक जानेवाला द्रव्यलिंगी जैन साधु वह भी द्रव्य लिंगी अर्थात नग्न... वस्त्रवालो को तो द्रव्य लिंगी भी कहा नहीं। कठिन काम है। मोक्षमार्ग प्रकाशक में स्पष्ट कहा है वस्त्र सहित साधुपना माने वह सभी गृहीतमिथ्यादृष्टि हैं। आहाहा! बहुत कठिन काम भाई, स्त्री को साधुपना माने, स्त्री को केवलज्ञान माने, स्त्री को तीर्थंकर माने (`मल्लिनाथ') यह सभी गृहीतमिथ्यात्व है। कठिन काम है बापू ! क्या हो ?

ऐसे राग की बात समस्त जीवलोक, कामभोग संबंधी कथा, काम अर्थात राग भोग अर्थात राग का करना और राग को भोगना, राग का कर्त्तापना और राग का भोक्तापना भाव आहाहा! ***शुभभाव तो निगोद में भी होता है, जो जीव बाहर आये नहीं, उन जीवों को शुभभाव तो है वहाँ, भगवान परमात्मा तो - ऐसा कहते हैं। लहसन, प्याज के जीवों को शुभभाव तो है। क्षण में शुभ, क्षण में अशुभ, क्षण में शुभ और क्षण में अशुभ (भाव होते है) बाहर साधन नहीं परंतु आत्मा है, इसलिये कर्मधारा में शुभाशुभ धारा तो उनको भी है। यह कोई नई चीज नहीं।*** आहाहा ! एक जीव (निगोद से) बाहर आकर मनुष्य हो एवं मुनि होकर महाव्रतादि पाले तब भी यह शुभभाव राग की क्रिया है। आहाहाहाहा!

ऐसी राग की क्रिया करना - ऐसा सुना है, ग्यारहवीं गाथा में तो आया न भाई ! कि इन भेदरूप भावों का तो अनादि से पक्ष है, और भेद की चर्चा करनेवाले

भी परस्पर बहुत मिलते हैं। हाँ ! बराबर है एकाएक कहीं सम्यग्दर्शन होता होगा ? कुछ भक्ति, भगवान की दया-दान-पूजा भी करे तपस्या करे, कुछ कर्म ढीले हों (इससे सम्यग्दर्शन प्राप्त हो).... धूल में तपस्या थी किस दिन तुम्हारी, यह अपवास है, यह उपवास नहीं, यह तो अशुभ वास है। स्वरूप में जब तक दृष्टि नहीं और स्थिर हो नहीं वहाँ तक, उपवास उसे हो सके नहीं। उप अर्थात स्वरूप शुद्ध चैतन्य के पास में बसना उसका नाम उपवास है, आत्मज्ञान बिना, सम्यग्दर्शन बिना यह राग की क्रिया उपवास आदि की, यह तो बंध का कारण (है), आहाहा ! यह राग की क्रिया की है और उसे भोगा है।

**`एकत्व से विरुद्ध होने से' आहाहा** ! जो कि राग का करना और राग का भोगना... यह एकरूप जो वस्तु है जिनस्वरूपी प्रभु (आत्मद्रव्य) इसमें यह भाव `विरुद्ध होने से अत्यंत विसंवादवाले हैं' आहाहा ! वीतराग मार्ग है भाई! वीतरागता अंदर जबतक न प्रगटे, वीतरागस्वरूप ही प्रभु है... जिनस्वरूपी ही आत्मा, उसके स्वरूप की वीतरागता, पर्याय में न प्रगटे और इसकी पर्याय में राग की एकता का भाव वर्तता, आहाहा ! यह अत्यंत विसंवाद है, दुःखरूप है आहाहा ! आकुलता को उत्पन्न करनेवाली यह दशा है।

शुद्धस्वरूप... त्रिकाली शुद्धस्वरूप वह आत्मा इसमें (जो) पुण्य-पाप है वह कहीं आत्मा नहीं। इसलिये यह पुण्य-पाप की क्रिया करना और एकरूप में दो-पना करना यह विरुद्ध होने से अत्यंत दुःखरूप है। अथवा अत्यंत बुरा करनेवाली है। आहाहाहा ! भगवानआत्मा वीतराग जिनमूर्ति प्रभु... इसमें यह दया, दान, व्रत, भक्ति का राग, आहाहा ! कहते हैं कि यह बुरा करनेवाली है यह बात। आत्मा को अहित करनेवाली है। यह बात सुनना (दुर्लभ)। आहाहा !

(आजकल) बहुत फेरबदल हो गया है अतः कठिन लगे। परंतु वस्तु तो यह है। तीनोंकाल (के) अनंत तीर्थंकर, वर्तमान में प्रभु (तीर्थंकर) बिराजते हैं वह यही बात कर रहे हैं। आहाहा !

इस समस्त जीवलोक को राग करना, और राग को भोगना एकत्व से विरुद्ध होने से अत्यंत बुरा करनेवाली है। आहाहा ! `वर्तमान (में) राग बुरा करता है और उसके फल (की) अपेक्षा (यह कथा) बुरा करनेवाली है।' आहाहा ! लोग तो - ऐसा कहते हैं कि पहले शुभ राग करो, करते-करते स्वर्ग में जाओगे और वहाँ से भगवान के पास जाकर सम्यग्दर्शन प्राप्त करोगे। यहाँ तो कहते कि राग तो बुरा करनेवाला है। अब इसका क्या हो? अत्यंत खराब करनेवाला है, बुरा करनेवाला है। आहा ! `अत्यंत' शब्द है न। `घट घट अंतर जिन बसे अने घट घट अंतर जैन,' यह राग

की एकता तोड़कर स्वरूप की एकता करे वह जैन है। सम्प्रदाय में होने से जैन कहलाये परन्तु ये कहीं जैन नहीं। आहाहा!

राग जो विकल्प है दया, दान, व्रत, आदि का उससे भिन्न होकर शुद्धचैतन्य की अंतरदृष्टि का अनुभव, यह जैनपना है। उसे सर्वज्ञ परमात्मा जैन कहते हैं। शेष पक्षधारी जैन रहे उन्हें जैन कहते नहीं। आहाहा ! (जैसे) काली जीरी की थैली हो और ऊपर शक्कर नाम लिखा हो तो कहीं कड़वापना मिट जाये ? आहाहा ! अंदर में जहाँ विकल्प राग है जहर... उसे अपना लाभ करनेवाला माने... आहाहा ! इसलिये वहाँ मिथ्यात्वपना चला जाता (है) ? आहाहा ! इसलिये वहाँ अजैनपना यह मिट जाता (है) ? आहाहा ! राग की एकता तोड़कर स्वरूप की एकता करे उसको यहाँ जैन कहा जाता है। जैन कोई संप्रदाय नहीं, जैन कोई पक्ष नहीं, जैन कोई गच्छ नहीं, वस्तु का स्वरूप जैसा है उसे जैन कहते हैं। आहाहा ! (यह समझना) कठिन बहुत काम है !!

- ऐसा अत्यंत बुरा करनेवाली है तो भी राग करना और राग भोगना... एकरूप से विरुद्ध होने से, `तो भी पहले अनंत बार अनंतबार सुनने में आयी है' कहनेवाले ऐसे ही मिले हैं उसे। राग करो, यह करो, व्रत पालो भक्ति करो, पूजा करो, करते-करते तुम्हारा आगे कल्याण हो जायेगा। ऐसे कहनेवाले मिले और तुमने अनंतबार सुना। आहाहा ! कहा न ? सुनने में आई है इसका अर्थ क्या हुआ कि कहनेवाले ऐसे मिले हैं तब उसने सुना न ? आहाहा !

जहाँ देखो वहाँ यही बात मिलेगी और यह तुमने अनंतबार सुनी है यह बात। आहाहा! पुण्य का भाव, दया-दान का व्रत का राग... यह करना और भोगना ऐसी बात तुमने अनंतबार अपने गुरु के पास, तुम्हारे कुगुरु से तो ऐसी बात अनंतबार सुनी उससे लाभ माननेवाले यह गुरु नहीं कुगुरु हैं। आहाहा ! ऐसी बातें बहुत कठिन लगती हैं।

यह तो सत्य का उद्घाटन है किसीकी निंदा की बात नहीं, यह तो वस्तु का स्वभाव है बापू ! आहाहा ! उसका आत्मा भी भगवान है, परंतु वस्तु के खबर विना दुःखी है यह सत्य का उद्घाटन प्रसिद्ध होता है। यह किसी व्यक्ति का अनादर कि निंदा नहीं है अरे ! यह भी प्रभु है, आत्मा है भाई ! आहाहा !

पहले अनंतबार सुनने में आयी है। तब समस्त जीवलोक में ऐकेन्द्रिय इसमें आ गये न ? हाँ ! एकेन्द्रिय कभी बाहर निकले नहीं, परंतु अनुभव में है तो सुनने में आ गया है। आहाहा ! ओहोहो ! इतने जीवों का समूह पड़ा है। आहाहा ! एक लहसन की राई जितने टुकड़े में, उसमें असंख्य तो शरीर और एक शरीर में अनंत

जीव। आहाहा ! - ऐसा पूरा लोक सूक्ष्म निगोद से भरा है। चौदह ब्रह्मांड़ यहाँ भी अनंत है, अनंत...अनंत...अनंत सूक्ष्म निगोद। आहाहा ! एक शरीर के अनंतवे भाग में सिद्ध हुये हैं, शेष सभी भटक रहे है यह सभी जीव, ऐसी बात सुनी है चाहे वे मनुष्य नहीं हुये हो, परंतु यह अंदर राग का अनुभव करते हैं, (न) स्वरूप की खबर नहीं तब उन सभी में राग का ही वेदन किया तो यह सुना और परिचय में आ गया। अनुभव में आ गया। आहाहाहा !

पहले अनंतबार सुना है, अनंतबार कहा, अनंतबार... अनंतकाल गया न ? मुनिपना द्रव्यलिंगपना भी अनंतबार लिया है, एकबार नहीं अनंतबार... भाव पाहुड़ में तो लेख है कि द्रव्यलिंग धारण करके भी जैन नग्नरूप, पंच महाव्रत धारण करके, कोई क्षेत्र बाकी नहीं कि जहाँ अनंतबार पुनः उत्पन्न न हुआ हो। भाव पाहुड़ में आया है। आहाहा ! वस्त्र सहित मुनिपना तो है ही नहीं। परंतु नग्नपना है और पंचमहाव्रत पाला है - ऐसे द्रव्यलिंगी भी जिसे आत्म ज्ञान न हो; यह राग से भिन्न चैतन्य है उसकी खबर न मिले ऐसे जीव... आहाहा ! अनंतबार - ऐसा द्रव्यलिंग धारण किया, और फिर भी कोई - ऐसा क्षेत्र शेष नहीं कि द्रव्य लिंग धारण करने के बाद अनंतबार जन्मा और मरा न हो। यह भाव पाहुड़ में लिंगपाहुड़ में पाठ है। आहाहा ! इतनी बार नग्नपना... और पंचमहाव्रत के परिणाम (जो) राग है यह तो राग है, आहाहा ! इतनी बार तुमने सुना और अनुभव में आया है, कि अनंतबार तुमने किया और बाद में भी - ऐसा द्रव्यलिंग धारण किया और स्वर्ग में गया और उसके बाद भी कोई क्षेत्र बाकी नहीं रहा कि जहाँ तुम अनंतबार जन्मे और मरे न हो। आहाहाहाहा ! कितने अवतार हुये यह ? क्या कहा ? समझमें आया ? द्रव्य लिंग धारण करके भी, अनंत जन्म-मरण किसी स्थान में नहीं किया - ऐसा नहीं। आहाहाहा ! - ऐसा है।

- ऐसा अनंतबार अनंत...अनंत... भव पहले, अनंतबार नग्न मुनि दिगम्बर हुआ, पंचमहाव्रत पाले, हजारों रानी छोड़ी, परंतु सम्यग्दर्शन नहीं (किया), यह राग की क्रिया से धर्म (माना) परंतु राग से भिन्न हमारी चीज प्रभु है, नौ तत्त्वो में राग है यह तो पुण्यतत्त्व है दया, दान... आत्मतत्त्व तो ज्ञायक है, (इनसे) भिन्न है। उसका अनुभव अर्थात् सम्यग्दर्शन किया नहीं। आहाहा ! उसके बिना उसने द्रव्य लिंग धारण करके भी, कितनी बार जन्म-मरण किया हरेक क्षेत्र में ? कि अनंतबार। आहाहा ! समझ में आता है कुछ ? सभी बात बदली हुई लगे बापू। आहाहा !

अनंतबार सुनने में आई है। अनंतबार परिचय में आई है। पुनः परिचय किया है - ऐसा सुनने का एवं राग का, आहाहा ! अनंतबार परिचय अर्थात सुनानेवाले

मिले उनके पास तुमने अनंतबार परिचय किया है। सत् समागम किया, सत् समागम करते है (- ऐसा मानकर) यह असत् समागम भी अनंतबार परिचय किया है तुमने, सत् समागम के नाम पर। आहाहा ! यह राग और पुण्य के भाव से धर्म मनानेवाले, उनका तुमने अनंतबार परिचय किया है। उसने तो अनंत बार किया है। परंतु उसका परिचय तुमने अनंतबार किया है। आहाहा ! सत् समागम करना, सत् समागम करना यह सत् समागम इसे हम मानते नहीं, आहाहा ! द्रव्यलिंग धारण किया हो, नग्न मुनि हो, हजारो रानी छोड़ी हों, परंतु अंदर में राग की एकता से धर्म मानता हो, और उसके पास अनंतबार सुना उसका परिचय किया, सत् समागम किया यहाँ तक आकर सत् समागम माना। बाहर से त्याग हुआ और पंचमहाव्रत यह सत्समागम यह साधु है। बापू यह सत् समागम है ? आहाहा !

इसमें है, इसमें है हो (गाथा में) अनंतबार परिचय में आयी है यह बात। आहाहा ! उसने सत् समागम मानकर असत् समागम अनंतबार किया है। आहाहा ! समझ में आया ? शास्त्र में तो यह आता कि सत् समागम करना, सत् परिचय करना, तब यह साधु हुआ हो, त्यागी हुआ हो और मुनि हुआ हो बाहर, यह सत् समागम ? आहाहाहा ! यह तो असत् है, सत् संग है ही नहीं, असत् संग है। चाहे तो यह नग्नमुनि होकर दया, दान, व्रत, भक्ति से धर्म मनवाता हो, यह सभी असत् समागम है, मिथ्यादृष्टि है। आहाहा ! इसका भी तुमने अनंतबार परिचय किया है, सत् मानकर, आहाहा ! लोग कहते हैं कि वे - ऐसा परिषह सहन करते हैं।

एक आया था न अभी कुरावड़-कुरावड़... कहाँ गये झमकलालजी ! कुरावड़ से आया था... नहीं वह क्षुल्लक, क्षुल्लक यहाँ आया था। अकेला विद्यार्थी था तब यहाँ आया था, क्षुल्लक हो गया तब घमण्ड हो गया था, बात सुने नहीं। फिर चंदुभाई के साथ बात करे। हमने तो कहा था भाई मैं बात करने लायक नहीं हाँ ? इतने इतने परिषह सहन करे क्या यह सभी समकिति नहीं ? इतना परिषह, इतना उपसर्ग, नग्नपना, वस्त्र नहीं, सर्दी में पानी, ठंड़ी में कपड़ा नहीं - ऐसा इतना सहन करे और यह सभी समकिति नहीं ? अरे प्रभु ! यहाँ तो यह कहा, देखो न ! अनंत बार ऐसे असत् समागम का परिचय (हुआ) अनंत बार तुमने परिचय किया, और उनसे तुम्हें सुनने मिला कि ऐसे राग से धर्म होगा और परम्परा भी राग से कल्याण होगा। आहाहा !

`और अनंतबार अनुभव में भी आ चुका है' तुम्हारे वेदन में, राग का वेदन अनंतबार हो गया है। शुभराग का दया, दान, व्रत, भक्ति का वेदन यह राग है, उसका अनंतबार तुम्हें अनुभव हो गया है, यह कोई नई बात नहीं। आहाहा !

प्रारंभ की गाथाओं में माल-माल भरा है। बाहर में समाहित कर देना है सभी। (कहते हैं) और अनंत बार अनुभव में भी आयी है। क्या कहा यह ? काम भोग की कथा। राग करना और राग भोगना इसका अनुभव भी तुम्हें अनंत बार हो गया है। राग करना और राग भोगना यह बात तुमने अनंत बार सुनी है उसका तुमने परिचय भी तुमने अनंत बार किया (है) और तुम्हारे अनुभव में भी यह बात अनंतबार आ गई है। आहाहाहा ! - ऐसा है।

मध्यस्थ होकर यह शास्त्र का वाचंन करे तो ख्याल में आये। उसप्रकार शास्त्र को कहना है वीतरागता, चारों अनुयोगो में कहने का आशय तो वीतरागता है। तब यह जब वीतरागता इसमें न आये और राग से लाभ हो यह आये, यह कथा विकथा है, धर्म कथा नहीं, पाप कथा है यह। आहाहा ! चाहे दस-दस, बीस-बीस हजार लोग सुनते हों। जिसमें - ऐसा माना जाय कि व्रत और तप एवं उपवास-भक्ति तथा मंदिर बनाना और इससे तुम्हारा कल्याण होगा, यह बात राग की है अनंतबार अनुभव में आ चुकी है। आहाहा ! बहुत कठिन बात है, पहली-दूसरी-तीसरी-चौथी गाथा देखो तो सही। आहाहा ! अमृत का सागर भगवान आत्मा है, इसे सुन, इसका परिचय कर और इसका वेदन कर न। यह कहने के लिये यह बात है। यह इतना (मात्र) कहने मात्र का शास्त्र नहीं,

आत्मा चैतन्यमूर्तिप्रभु है, उसका सम्यग्दर्शन और अनुभव करो उसका ज्ञान करो, और इसमें स्थिर हो। यहाँ कहने का आशय यह है। यहाँ आवो...आवो... कहकर फिर ठहरने को अंदर में ले जाना है। जहाँ-तहाँ रुकने के लिये बात नहीं करते, रुका हुआ तो अनंतकाल से है ही। आहाहा ! परंतु अब यह कह कर प्रभु तुम यहाँ आओ न अंदर, अपने घर में जाओ न, इस घर में जाने के लिये यह बात है। आहाहाहा !

`कैसा है जीवलोक' ? यह जगत में जीव कैसा है ? अनंतजीव हैं न ? एक ही जीव नहीं कहा, अतः जीवलोक (कहा है) आहा ! सभी जीव। अनंता जीव कैसे है ? `**कि जो संसाररूपी चक्र के मध्य में स्थित**' आहाहा ! जैसे चक्की होती है न चक्की उसके मुँह (बीच) में कीला हो तो, गेहूँ डालें तो जो गेहूँ वही के वही स्थिर हो वह पिसते नहीं, दूर जाकर अंदर जाये तो पिस जाये। आहाहा ! इसप्रकार जीव-संसाररूपी चक्र के मध्य में पड़े हैं। आहाहा ! है ? चक्र के बीच में स्थित है। यह जीव बराबर संसार चक्र के राग और पुण्य के भाव में बराबर स्थित हुआ है। आहाहा ! संसाररूपी चक्र अर्थात ? कि शुभ और अशुभभाव दोनों संसाररूपी चक्र है। अकेला शुभ ही नहीं और अकेला अशुभ भी नहीं।

शुभ और अशुभ - ऐसा संसाररूपी चक्र है। कर्म... कर्म, आहाहा ! कर्मधारा अकेली कर्म धारा... शुभ और अशुभ धारा इसके बीच में स्थित है। आहाहाहा ! यह जीवलोक, जगत का प्राणी, अनादि से, आहाहा ! संसाररूपी चक्र, संसरण करना, घूमना, घूमना पुण्य और पाप, पुण्य और पाप, पुण्य एवं पाप में ही घूमता रहता है। आहाहा ! इसके बीच में स्थित होने से... `लगातार' जिसने द्रव्य अर्थात जगत के पदार्थ अनंतबार संबंध में आये, अनंत द्रव्य परावर्तन किये यह जगत के जितने परमाणु हैं यह शरीरादि अनंत, यह इसके संयोग में अनंत बार आ गये, द्रव्य परावर्तन अनंतबार किया है। आहाहा ! ***यह तो सामान्य कथन है। कितने परमाणु ऐसे ही स्थित हैं। परंतु जो (संयोग में आए हैं) उनकी बात करते है कितने तो परमाणु ऐसे है, परिभ्रमण में आये नहीं, छुये नहीं यह बात यहाँ नहीं लेना।*** जैसे वह निगोद का जीव, किसी ने अभी तो सुना नहीं, यह वेदता है, यही सुना है। इसीप्रकार यहाँ कितने जीवो ने बहुत परमाणुओ को छुआ नहीं, यह नहीं लेना, परंतु यह स्पर्श हुये द्रव्य परावर्तन में... कारण कि इतनी इसकी शक्ति मिथ्यात्व की है, इसलिये अनंत द्रव्य-परावर्तन किये है - ऐसा कहना है। आहाहाहा !

जीवलोक... अनंत जीवलोक कैसा है ? अज्ञानियों का जीवलोक, आहाहा ! कि जिसने यह परमाणु अनंत अनंत स्थित हैं लोक... ठसाठस भरा (है), पूरा लोक परमाणुओं से ठसा-ठसा भरा है। यहाँ अनंत अनंत परमाणु ठसा-ठस भरे हैं। आहाहा ! यह सभी परमाणुओं का परावर्तन तुम्हारे संयोगरूप संबंध में अनंतबार द्रव्य परावर्तन हो गया है। आहाहा ! ऐसे पुद्गल तुम्हारे पास अनंत बार आकर गये हैं, आकर गये हैं, अनंत परावर्तन किये हैं। आहाहा ! पुण्य और पाप के राग के बीच में स्थित होने से, आहाहा ! संसार के जितने परमाणुओं की संख्या... यह सभी तुम्हारे संबंध में पलट-पलट कर सभी परावर्तन में आ गये हैं। आहाहाहा !

`द्रव्य परावर्तन' अनंत परावर्तन हुये हैं। द्रव्य के अनंत परावर्तन, परावर्तन (अर्थात) पलटकर अनंतबार रजकण पुनः आये हैं। आहाहा ! यह शरीर के रजकण हैं। इसके पहले आत्मा के संबंध में नहीं थे - ऐसा नहीं। ऐसे रजकण जो अनंत हैं यह सभी आत्मा के संबंध में द्रव्य परावर्तन में आ चुके हैं। आहाहा !

`क्षेत्र परावर्तन'... है ? चौदह राजू लोक है, इसका कोई एक अंगुल का असंख्यवाँ भाग भी वहाँ अनंतबार जन्मा-मरा नहीं - ऐसा नहीं। (पूरे) क्षेत्र में अनंतबार परावर्तन किया है। प्रत्येक क्षेत्र में, ***जहाँ सिद्ध भगवान विराजते हैं, उस क्षेत्र में भी अनंतबार जन्मा और मरा है। निगोद का जीव होकर, आहाहा ! सिद्ध भगवान विराजते हैं वहाँ निगोद के जीव है। सूक्ष्म निगोद।*** आहाहा ! तब क्षेत्र के अनंत परावर्तन, आहाहा !

क्योंकि चौदह ब्रह्मांड़ तो असंख्य प्रदेशी ही है लोक, और अनंतकाल से प्रत्येक क्षेत्र में अनंतबार जन्मा और मरा है। आहाहाहा ! सिद्ध भगवान रहते हैं वहाँ भी अनंतबार जन्मा मरा है निगोदरूप से, ऐसे अनंत क्षेत्र परावर्तन किये हैं, आहाहा !

इसीप्रकार `काल परावर्तन'... असंख्य चौबीसी हैं, उसके एक-एक समय में अनंतबार परावर्तन हो गया है। आहाहा ! असंख्य चौबीसी हैं, असंख्य समय की, काल की । (अपेक्षा) उसका पहला समय... इसप्रकार एक-एक समय अनंतबार परावर्तन करके भटक रहा है। इसीप्रकार दूसरे समय, तीसरे समय, चौथा समय इसप्रकार अनंत समय, आहाहाहा ! असंख्य परावर्तनमें असंख्य समय ही होते हैं। अनंत नहीं पुद्गल परावर्तन अनंत होते ते हैं उसमें अनंत समय होता हैं। चौबीसी असंख्य हैं, तब एक-एक चौबीसी इसमें समय असंख्य ही हों। आहाहा ! प्रत्येक प्रत्येक समय अनंतबार, क्षेत्र संबंधी परावर्तन किया है, परिभ्रमण किया है इसने। आहाहा ! काल अपेक्षा एक-एक समय में भी अनंतबार आया है परिभ्रमण में आहाहा ! अनंतकाल गया न ? शुरूआत है कहीं यहाँ पूरा हुआ परंतु आदि है ? अनंत...अनंत...अनंत...अनंत...अनंत...अनंत...अनंत...अनंत... इसीप्रकार चले जाते है न। आहाहा ! ऐसे एक-एक समय में अनंतबार परावर्तन करके अनंती चौबीसी और काल के अनंत पुद्गल परावर्तन किये। आहाहा ! ये यह राग के बीच में रहा है, शुभ और अशुभ, शुभ और अशुभ, आहाहा !

भगवानआत्मा राग से भिन्न है, उसकी खबर की नहीं उसे पहचाना नहीं उसे जाना नहीं। प्रभु, सर्वोत्कृष्ट परमात्मा तो तुम्हारे पास ही विराजता है न ! पर्याय के पास, तुम्हारी अर्थात तुम पर्याय को (अपनी) मानते हो, और राग को (अपना) मानते हो, तो इस राग की पर्याय के पास ही प्रभु विद्यमान है पूरा। आहाहा ! समझ में आया ? पास का अर्थ ? कि एक समय की पर्याय और राग ऊपर तुम्हारी दृष्टि है इसलिये तुम्हारे पास ही प्रभु (द्रव्य) विराजमान है। आहाहा ! उसे तुम देखते नहीं, और ऐसे राग वर्तमान पर्याय में अनंत, अनंत काल (से) अनंत परावर्तन किये हैं। आहाहा !

थोड़ा अभ्यास चाहिए भाई ! तो थोड़ा समझ में आये, (जिसे) बिलकुल अभ्यास न हो उसे तो - ऐसा लगे कि यह क्या है ? आहाहा ! अभ्यास नहीं (एवं) बाहर की प्रवृत्ति में रुक गये, आहाहा ! जो बात मूल है उस तक पहुंचने को कुछ सुनने का समय निकालता नहीं। आहाहा ! और इसमें अनंत समय बिताया - ऐसा कहते हैं। आहाहा ! राग करना और राग भोगना - ऐसा जो अनंती चौबीसी में एक-एक समय में ऐसे अनंतभव किये, काल परावर्तन किया, आहाहा !

`भव' (परावर्तन) एक नरक में भव अनंतबार किये, मनुष्य के भव अनंतबार किये,

स्वर्ग के भव अनंतबार किये, पशु के भव अनंत बार किये (हैं) भव अनंत किये हैं। आहाहा ! द्रव्य-क्षेत्र-काल और भव अनंत परावर्तन किये। अब रहा 'भाव' शुभ और अशुभ भाव भी अनंत परावर्तन किये। आहाहा ! ***चाहे निगोदमें से नहीं निकला, उस जीव ने भी शुभ-अशुभ भाव अनंतबार किये हैं। इसमें आ गया कि नहीं ? आहाहाहा ! शुभ भाव और अशुभ भाव ऐसे अनंतबार पलट-पलट कर भाव अनंतबार किये हैं। आहाहा ! यह (शुभाशुभ भाव) कोई कहीं नयी चीज नहीं।*** आहाहा ! यह कहीं जीव का स्वरूप नहीं। आहाहा !

जैसे समस्त जीवलोक... जो निकले नहीं (निगोद से) उनने भी सुनी है - ऐसा कहना चाहते हैं। ऐसे अनंत जीव निगोदमें से बाहर निकले नहीं, परंतु फिर भी शुभाशुभ भावरूप अनंतबार परावर्तन किया है इसने, आहाहा ! इसमें से निकला यह ? आहाहा ! यह ? आहाहा ! फूलचन्दजी ने निकाला था न पहले, तो यह इसमें से निकाला (था)। यह अनंतजीव जो हैं उन सभी जीवों ने शुभाशुभ भाव का अनंतबार परावर्तन किया है, आहाहा ! तो इसमें यह निगोद के जीव भी आ गये। आहाहाहाहा ! **पहले फूलचन्दजी ने (यह अर्थ) निकाला था (कहा था) कि एकेन्द्रिय में भी शुभभाव है। शुभ-अशुभ-शुभ (से) अशुभ होते हैं। इससे यह निकलते है (त्रस में आते) आहा** ! अनंत जीव जो अभी बाहर नहीं निकले उसने भी शुभाशुभ भाव का अनंतबार परावर्तन किया है। शुभाशुभ भाव का परावर्तन करके अनंत पुद्गल परावर्तन किये हैं। आहाहाहा !

क्या संतो की वाणी गंभीर, गंभीर, गंभीर... अगाध थोड़े में बहुत बहुत भर दिया है। आहाहा ! यह सिद्धांत कहलाये। आहा ! जिसमें अनेक भाव... थोड़े शब्दों में भी अंत न आये, ऐसे भाव भरे हैं, हैं तो यह भाव पुद्गल की पर्याय में, जीव के भाव कहीं वाणी में नहीं। परंतु वाणी में जीव के भावों और अपने भावों को कहने की शक्ति है। इसलिये वाणी - ऐसा कहती हैं कि शुभ-अशुभ भावों का परावर्तन प्रत्येक जीव ने अनंतबार किया है। आहाहा !

कैसा है पूरा जीवलोक - ऐसा कहा न ? पूरा कैसा है जीवलोक इसमें से कोई बाकी नहीं रहा। निगोद के... और पूरा जीवलोक जो है परिभ्रमण के करनेवाले यह सभी पुण्य और पाप के भाव अनंतबार परावर्तन करके, कर चुका है। आहाहा ! जिससे पुण्य बंधे - ऐसा शुभभाव और जिससे पाप बंधे - ऐसा अशुभभाव यह प्रत्येक (जीव) जीवलोक ने अनंतबार किया है। - ऐसा है इसमें देखो, गंभीर बात है प्रभु ! आहाहा ! तीनलोक के नाथ जिनेश्वर देव परमेश्वर, इनकी वाणी का क्या कहना ? आहाहा ! संत ऐसी बात को बताते हैं, छद्मस्थ। आहाहा ! थोड़े में बहुत करके बताया है। तीनलोक के नाथ की बात को क्या कहना। आहाहा ! इसके अल्प शब्दों में

तो चौदह ब्रह्मांड और तीनकाल तीनलोक ज्ञात हो जाता (है) आहाहाहा !

भावरूप अनेक परावर्तनों के कारण जिसने भ्रमण प्राप्त किया है। आहाहा ! द्रव्य के संयोग का, क्षेत्र का-काल का समय, समय उत्पन्न होना, भव का और भाव का शुभभावपने का उसे लेकर शुभ-अशुभभाव के परावर्तन के कारण जिसने भ्रमण प्राप्त हुआ है, भ्रमण प्राप्त हुआ है। आहाहा ! जैसे वह भोंरा-भोंरा नहीं आता ? लट्टू, लट्टू इसप्रकार मारें अर्थात बच्चे कहते हैं सो गया, अर्थात इतनी तेजी से घूमे, इतनी तेजी से घूमे कि घूमना दिखे नहीं। यह भोंरा इस प्रकार (घूमता) हिल जाय तब घूमता दिखता है फिर एकदम घूमने लगे। इस पंखे में क्या है ? यह घूमे तब इसकी पंखड़ी दिखे नहीं। चार पंखड़ी, एकदम घूमे तब पंखड़ी दिखे नहीं, एकदम एकदम फिरे तो दिखे नहीं। आहाहा !

यहाँ कहते हैं कि अनंतपरावर्तन के कारण इसको भ्रमण प्राप्त हुआ है। भ्रमण-भ्रमण चक्कर चढ़ गया है। भटकने के रास्ते चढ़ गया है। आहा ! विशेष कहेंगे..... (प्रमाण वचन गुरुदेव !)